इकाई 2 एक स्रोत के रूप में पुरातत्व विज्ञान और प्रमुख पुरातात्विक-स्थल*

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 पुरातात्विक स्थल और उनकी बनावट

2.2.1 मानव निर्मित उपस्कर तथा *इकोफैक्ट*

2.2.2 पुरातात्विक स्थल

2.3 पुरातात्विक विधियाँ

2.3.1 पुरातात्विक अन्वेषण

2.3.2 पुरातात्विक उत्खनन

2.4 साक्ष्य का विश्लेषण

2.4.1 तिथि-निर्धारण की तकनीक

2.4.2 उत्पादन तकनीक और प्रक्रियाएँ

2.4.3 व्यापार और विनिमय

2.4.4 पर्यावरणीय पुरातत्व

2.4.5 आहार और जीवन निर्वाह

2.4.6 प्राचीन समाजों की जाँच-परख

2.4.7 जल मग्न पुरातत्व

2.5 भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ प्रमुख पुरातात्विक स्थल

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जानेंगे:

- अतीत के पुनर्निर्माण में पुरातत्व एक स्रोत के रूप में;
- पुरातात्विक स्थल क्या है और वे कैसे बनते हैं?;
- पुरातत्व में क्षेत्रीय कार्य (field work) और तथ्यों के संकलन की विधियाँ;
- पुरातात्विक साक्ष्यों के परीक्षण हेतु प्रयोग की जाने वाली विभिन्न तकनीकों के बारे में जानेंगे कि वे अतीत के बारे में हमें क्या बताते हैं; और
- भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ प्रमुख पुरातात्विक स्थलों के बारे में।

* डॉ. दीपक के. नायर, सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग, एस.जी.एन.डी. खालसा कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

2.1 प्रस्तावना

इतिहास और पुरातत्व दोनों एक ही उद्देश्य अर्थात् अतीत के पुनर्निर्माण में अपनी भागीदारी निभाते हैं। हालाँकि, अतीत के पुनर्निर्माण हेतु उनके स्रोत और तरीके भिन्न होते हैं। इतिहास में लिखित स्रोतों का प्रयोग होता है। इसके विपरीत पुरातत्व अवशेषों के रूप में उन सामग्रियों का अध्ययन करता है, जो पृथ्वी पर मनुष्यों द्वारा बनाई और उपयोग की गईं थीं। ये अवशेष मानव व्यवहार और अनुभव से जुड़ी जानकारी देती हैं। ये अवशेष उन वस्तुओं की एक विस्तृत श्रृंखला हैं, जिन्हें लोगों ने इस्तेमाल किया और फेंक दिया, जैसे कि पत्थर के औज़ार, इमारतें, ईंटें, मिट्टी के बर्तन, धातु की वस्तुएँ, मूर्तियाँ, सिक्के, शिलालेख आदि। ये सभी सामग्रियाँ पृथ्वी की सतह और उसके नीचे पुरातात्विक स्रोत के रूप में संरक्षित हैं। इनमें सिक्कों और शिलालेखों के अध्ययन हेतु मुद्राशास्त्र और पुरालेखशास्त्र नामक उप-विषयों को भी जोड़ा गया है।

मानव अतीत को मोटे तौर पर दो भागों में बाँटा गया हैः

i) ऐतिहासिक, और

ii) पूर्व-ऐतिहासिक काल।

ऐतिहासिक काल की शुरुआत उस समय हुई, जब लगभग 5000 साल पहले विभिन्न क्षेत्रों में लेखन कार्य शुरू हुआ। बाद में जैसे-जैसे लेखन का विकास हुआ, उसका उपयोग तथ्यों के संकलन तथा साहित्यिक लेखन आदि में किया गया। हालाँकि, साक्षर काल मानव अतीत का एक बहुत छोटा हिस्सा है, जो पिछले कुछ हज़ार वर्षों की जाँच-पड़ताल करने में हमारी मदद करता है। जबकि प्रागैतिहासिक काल की शुरुआत तीस लाख साल पहले मानव जाति की उत्पत्ति से हुई। हालांकि, पुरातत्व प्रागैतिहासिक काल तक ही सीमित नहीं है, लेकिन समय-समय पर मनुष्यों द्वारा छोड़ी गई सभी सामग्रियों का अध्ययन किया जाता है। इसलिए, पुरातत्वविदों ने प्रागैतिहासिक उपकरणों से लेकर वर्तमान में दैनिक उपयोग की वस्तुओं तक सभी का अध्ययन किया ळें

पुरातत्व का इतिहास

प्रत्येक समाज अपने अतीत से जुड़ा होता है। पुरातत्व की उत्पत्ति का पता सुंदर पुरानी चीजों और खजानों की खोज के आकर्षण से लगाया जा सकता है। 1817 में डेनिश विद्वान सी. जे. थामसन ने पुरातत्व के प्रारंभिक चरण को पाषाण युग, कांस्य युग तथा लौह युग में बाँटा। उस समय के पुरातत्व में ग्रंथ-आधारित पुरातत्व और प्रागैतिहासिक पुरातत्व शामिल थे, जो ग्रंथों पर आधारित नहीं थे। आज यह कई विषयों जैसे पर्यावरण पुरातत्व, जैव-पुरातत्व, भू-पुरातत्व आदि में बँट गया है।

भारत में भी पुरातत्व की शुरुआत ऐसे ही हुई। यह प्राचीन वस्तुओं को इकट्ठा करने की कला के बाद औपनिवेशिक काल के दौरान हुए साहसिक खोज के साथ शुरू हुआ। इसमें उत्खनन और प्रासंगिक विश्लेषण के कठोर तरीकों के बिना स्थलों और अवशेषों का अध्ययन किया गया था। शुरुआत में ग्रंथ-आधारित पुरातत्व का प्रभुत्व था। सर अलेक्जेंडर कनिंघम ने भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी भाग का विस्तार से सर्वेक्षण किया। कनिंघम ने चीनी तीर्थयात्रियों जैसे ज़ुआन ज़ंग के वृत्तांत में उल्लिखित शहरों और बस्तियों की पहचान करने की कोशिश की। 1861 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग (एएसआई) की स्थापना की गई। इसके पहले महानिदेशक कनिंघम थे। 19वीं

शताब्दी के अंतिम दशकों में कई क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया गया, स्मारकों का मानचित्र और संकलन तैयार किया गया। 20वीं सदी की शुरुआत में, वायसराय लॉर्ड कर्जन के प्रयासों तथा पुरातत्व में उनकी रुचि के कारण भारतीय उपमहाद्वीप में पुरातात्विक अवशेषों के सम्मान तथा प्राचीन भारतीय स्मारकों के संरक्षण हेतु 1904 में प्राचीन स्मारक संरक्षण अधिनियम पारित किया गया था।

सर जॉन मार्शल और सर मार्टिमर व्हीलर के अधीन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने भारतीय उपमहाद्वीप में बड़े पैमाने पर अन्वेषण और उत्खनन किया। स्वतंत्रता के बाद भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने अपना काम जारी रखा। इसी समय, कई विश्वविद्यालयों और शैक्षणिक संस्थानों में पुरातत्व विषय के रूप में पढ़ाया जाने लगा, जो पुरातात्विक अनुसंधान के क्षेत्र में भी सक्रिय हुआ। आज भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग एक विशाल संस्थान है। राज्य पुरातत्व विभाग और डेक्कन कॉलेज की तरह अन्य शैक्षणिक संस्थान भी हैं। कई विश्वविद्यालय पुरातत्व पढ़ाते और उत्खनन कार्य भी करवाते हैं।

2.2 पुरातात्विक स्थल और उनकी बनावट

पुरातात्विक स्थल विभिन्न प्रकार के होते हैं। आइए, देखें कि पुरातात्विक स्थलों का निर्माण किस प्रकार होता है।

2.2.1 मानव निर्मित उपस्कर तथा *इकोफैक्ट*

पुरातत्व उन अवशेषों के अध्ययन पर आधारित है, जो मानव द्वारा बनाई गई या परिवर्तित वस्तुएँ थी। अवशेष महत्वपूर्ण तथ्य प्रदान करते हैं जैसे कि उनके उत्पादन की प्रक्रिया, कच्चा माल जिसमें वे बने हैं, उनके उत्पादन में शामिल तकनीक, वस्तुओं का उपयोग आदि। एक दूसरी तरह के साक्ष्य हैं – जैविक और पर्यावरणीय अवशेष। यह पर्यावरणीय तथ्यों के रूप में जाने जाते हैं और प्राचीन मानव गतिविधियों के कई पहलुओं को प्रकट करते हैं। पर्यावरणीय तथ्यों में जानवरों की हड्डियों, पौधों के अवशेष, मिट्टी और तलछट आदि शामिल हैं। वे हमें पर्यावरणीय परिस्थितियों से संबंधित उन पहलुओं को समझने में मदद करते हैं कि लोग कैसे रहते थे और किस तरह का भोजन खाते थे, जलवायु में बदलाव और मनुष्यों पर उसका प्रभाव आदि।

2.2.2 पुरातात्विक स्थल

पुरातात्विक स्थलों पर मानव निर्मित उपस्कर, पर्यावरणीय अवशेष तथा संरचनाएँ एक साथ पाई जाती हैं। पुरातात्विक स्थल एक ऐसा स्थान है जहाँ मानव गतिविधियों के महत्वपूर्ण चिन्ह मिलते हैं। दूसरे शब्दों में, ये ऐसी जगहें हैं जहाँ इंसान ने अतीत में कुछ गतिविधियाँ की थी। मनुष्यों द्वारा गुफाओं में चित्रकारी करने से लेकर पिरामिड बनाने तक स्टोनहैन्ज, मोहनजोदड़ो जैसे शहरों से लेकर एक छोटी सी जगह जहाँ शिकारी-संग्रहकर्ता ने अपने पत्थर के औज़ार बनाए आदि तक की सीमा बहुत विस्तृत है। इसलिए, पुरातात्विक स्थलों की जाँच पुरातत्वविदों का प्राथमिक कार्य बन जाता है, जिसके आधार पर प्राचीन मानव जीवन को पुनर्निर्मित किया जा सकता है।

अब प्रश्न यह है कि पुरातात्विक स्थल कैसे बनते हैं? दूसरे शब्दों में, वे उस स्थिति में कैसे पहुँचते हैं जिसमें पुरातत्वविद् उन्हें पाते हैं? पुरातात्विक स्थल बनने के दो तरीके हैं:

i) सांस्कृतिक, और

ii) प्राकृतिक।

इन्हें निर्माण प्रक्रियाओं के रूप में जाना जाता है। सांस्कृतिक निर्माण की प्रक्रिया का अर्थ ऐसी गतिविधियों से है जिसे मनुष्य जानबूझकर एक जगह पर करते हैं, जैसे कि पुरावशेष बनाना और उनका उपयोग करना, घर बनाना या उन्हें छोड़ना, कचरा निपटान के लिए गड्ढे खोदना, वस्तुओं को फेंकना या आकस्मिक गतिविधियों जैसे कि चीजों की क्षति होना आदि। प्राकृतिक निर्माण प्रक्रियाएँ वे हैं जो मुख्य रूप से उन तत्वों की जानकारी देती है जैसे प्राकृतिक घटनाओं /स्थलों को कैसे दफन कर देती है। उदाहरण के लिए, हवा, पानी या जानवरों की गतिविधियाँ उन चीजों में परिवर्तन लाती हैं जो मनुष्यों द्वारा छोड़ने के बाद एक स्थल पर मौजूद हैं। हवा, सूरज, बारिश धीरे-धीरे इन संरचनाओं को मिटा देते हैं। हवा द्वारा लाई गई रेत या बारिश द्वारा लाए गए तलछट धीरे-धीरे स्थलों पर जमा हो जाते हैं। कभी-कभी, बाढ़ के कारण रेत जमा होने से स्थलों और उसके कुछ भाग दफन हो जाते हैं।

कभी-कभी प्राकृतिक निर्माण प्रक्रियाएँ पुरातात्विक स्रोतों को बचाने में मदद करती हैं। उदाहरण के लिए, इटली में 79 सी.ई. में ज्वालामुखी माउंट वेसुवियस के फूटने से उसकी राख के नीचे पोम्पेई शहर दब गया था। ज्वालामुखी की राख ने पोम्पेई शहर को संरक्षित किया। इसी तरह, एल्प्स के बर्फीले क्षेत्र या आर्कटिक, या बेहद शुष्क क्षेत्र जैसे रेगिस्तान या पहाड़ों में जैविक पदार्थ संरक्षित होते हैं। उदाहरण के लिए, मिस्र के पिरामिड अथवा पेरू के एंडीज पहाड़ों में पाए जाने वाले पुराशव शामिल हैं। ब्रिटेन के स्टारकार क्षेत्र जैसे वेटलैंड और दलदली क्षेत्र भी लकड़ी, पौधों के उत्पादों आदि जैसे कार्बनिक पदार्थों को संरक्षित करते हैं। गर्म तापमान, नमी और वर्षा जलवायु, अम्लीय मिट्टी, घनी वनस्पति और कीट गतिविधियों के कारण अवशेष संरक्षित नहीं रह पाते हैं।

बाएँः कालीबंगन का एक पुरातात्विक टीला, राजस्थान। श्रेयः डॉ. दीपक के. नायर.

दाएँः पुरातात्विक उत्खनन। श्रेयः डॉ. दीपक के. नायर.

2.3 पुरातात्विक विधियाँ

पुरातात्विक साक्ष्य प्राप्ति के लिए पहला प्रमुख कदम पुरातात्विक क्षेत्रीय कार्य है। इन क्षेत्रों में पुरातात्विक साक्ष्य एकत्रित करने के दो तरीके हैंः

i) पुरातात्विक अन्वेषण या सर्वेक्षण, और

ii) पुरातात्विक खुदाई।

हम नीचे इनका पता लगाएँगे।

2.3.1 पुरातात्विक अन्वेषण

पुरातात्विक अन्वेषण में स्थलों के सतह पर पाए जाने वाले अवशेषों के आधार पर पुरातात्विक स्थलों की जाँच की जाती है। दूसरे शब्दों में, पुरातत्वविदों ने सतह पर पाए जाने वाले अवशेषों के आधार पर, बिना खुदाई किए, उन स्थलों की जाँच की है। यह अभ्यास पुरातात्विक स्थलों का पता लगाने के साथ शुरू होता है। पुरातत्वविदों द्वारा यह कार्य एक क्षेत्र या किसी विशेष क्षेत्र में पुरातात्विक स्थलों को खोजने के लिए किया जाता है। इसके लिए वे विभिन्न तरीकों का इस्तेमाल करते हैं। प्रारंभ में, स्थलों को हवाई सर्वेक्षण (हवाई जहाज का उपयोग करके) के माध्यम से उच्च टीले, फसल उगाने के तरीके और क्षेत्रों आदि का पता लगाया जाता है। तकनीकी प्रगति के साथ, अब यह उपग्रह द्वारा लिए गए चित्रों और भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) के माध्यम से किया जाता है। जमीनी सर्वेक्षण के कई अलग-अलग तरीकों के साथ भी पुरातात्विक स्थलों की खोज और जाँच की जाती है। ऐसी ही एक भौतिक पद्धति, गाँव-से-गाँव का सर्वेक्षण है, जिसमें पुरातत्वविदों का एक दल विभिन्न गाँवों में जाता है और अतीत की पुरानी बस्तियों या अवशेषों के बारे में पूछता है। इस पद्धति का प्रयोग भारत में बड़े पैमाने पर किया गया है। क्षेत्रीय सर्वेक्षण के लिए सावधानीपूर्वक योजना बनाई जाती है। इसमें पूरे क्षेत्र को एक ग्रिड और उपभागों में विभाजित किया जाता है। पुरातत्वविद सभी चयनित ग्रिडों या नमूना इकाइयों का पूरी तरह जाँच-पड़ताल करते हैं और मानवीय गतिविधियों का पता लगाते हैं। इस तरह के गहन अन्वेषण नए पुरातात्विक स्थलों की खोज में मदद करते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में कुछ बड़े पैमाने पर पुरातात्विक सतह सर्वेक्षण थे:

- विजयनगर अनुसंधान परियोजना (वीआरपी),
- विजयनगर महानगर सर्वेक्षण (वीएमएस),
- सांची सर्वेक्षण परियोजना (एसएसपी),
- टू रेन्स परियोजना इत्यादि।

पुरातात्विक स्थलों को एक वैश्विक स्थान निर्धारण प्रणाली (ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम – जीपीएस) के साथ रेखांकित किया जाता है ताकि उनके वितरण के तरीके को एक मानचित्र पर दिखाया जा सके। स्थानीय विश्लेषण यह समझने के लिए महत्वपूर्ण होता है कि अतीत में लोगों ने बस्तियों के लिए कुछ निश्चित क्षेत्रों को क्यों चुना? इसे समझने के लिए उनके स्थानों, प्रकृति, संख्याओं को रिकॉर्ड किया गया, उनकी तस्वीरें ली गईं और चित्र तैयार कराए गए। सर्वेक्षण के उद्देश्यों के आधार पर आगे के विश्लेषण के लिए नमूने के रूप में पुरावशेषों को भी एकत्र किया गया।

अतीत को बेहतर जानने के लिए पुरातत्वविदों ने खोज और उत्खनन दोनों में वैज्ञानिक तकनीकों की एक प्रणाली का उपयोग किया। पुरातात्विक अन्वेषणों में ग्राउंड पेनेट्रेटिंग राडार (जीपीआर), विद्युत प्रतिरोधकता सर्वेक्षण, मैग्नेटोमेटरी जैसी तकनीकों का उपयोग किया जाता है। जो खुदाई के बिना स्थलों और कब्र संरचनाओं की प्रकृति को जानने में हमारी मदद करते हैं। इन तकनीकों को 'गैर-विनाशक' के रूप में जाना जाता है क्योंकि वे किसी भी तरह से पुरातात्विक रिकॉर्ड को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं और न ही बदलते हैं। हाल के वर्षों में दफन की गई संरचनाओं की खोज में लाइट डिटेक्शन एंड रेंजिंग (LIDAR) विधि बहुत महत्वपूर्ण रही है। इस विधि में एक विशेष सर्वेक्षण

क्षेत्र में एक लेजर स्कैनर ले जाने वाला एक विमान तेजी से जमीन पर लेजर डालता है। यह अपने अनुसार जमीन की एक सटीक तस्वीर बनाता है। फिर, विभिन्न सॉफ्टवेयर की मदद से, कब्र संरचनाओं की पहचान की जाती है। यह तकनीक उन क्षेत्रों में बेहद सहायक है, जहाँ बहुत घनी वनस्पति है, जिसे बहुत मुश्किल से खोजा जाता है। उदाहरण के लिए, लाइट डिटेक्शन एंड रेंजिंग (एलआईडीएआर) के उपयोग से मेसो-अमेरिका में मायन सभ्यता के नए संरचनात्मक परिसरों को प्रकाश में लाया गया। इससे कंबोडिया में मध्यकालीन खमेर साम्राज्य के शहरों के नेटवर्क तथा अंकोरवाट के प्रसिद्ध मंदिर परिसर का भी पता लगाया गया है।

2.3.2 पुरातात्विक उत्खनन

भू-सतह अन्वेषण से अतीत के बारे में कुछ सवालों के जवाब देने में हमें मदद मिली हैं। हालांकि, सतह से एकत्र किए गए पुरावशेष अपने मूल संदर्भ में नहीं पाए जाते हैं, क्योंकि सतह पर उनकी उपस्थिति उन गतिविधियों का एक परिणाम है, जिन्होंने मूल अभिसाक्ष्यों को दिग्भ्रमित किया है। उदाहरण के लिए, बारिश से कटाव, जुताई, जानवरों को दफनाने आदि के कारण सतह के पास पुरातात्विक जमाव का विस्थापन हो सकता है। इसलिए, एक स्थल के विभिन्न सांस्कृतिक चरणों व उसके संदर्भों की गहरी समझ के लिए पुरातात्विक खुदाई की जाती है। इसमें व्यवस्थित रूप से एक स्थल की खुदाई करके अतीत में मानव द्वारा बनाए गए और उपयोग की गई सामग्रियों को सावधानीपूर्वक उजागर किया जाता है।

पुरातात्विक स्थलों पर विभिन्न पुरातात्विक संस्कृतियों के अवशेष पाए जाते हैं। 1929 में वी. गॉर्डन चाइल्ड ने बर्तन, औज़ार, गहने, दाह संस्कार, घर इत्यादि अवशेषों को पुरातात्विक संस्कृति के रूप में परिभाषित किया। इस प्रकार के अवशेष समय और स्थान के अनुसार अलग-अलग तरह के होते हैं। इसलिए, उन्हें विभिन्न पुरातात्विक संस्कृतियों के रूप में पहचाना जाता है। पुरातात्विक स्थलों पर या एकल पुरातात्विक संस्कृति का आधिपत्य होता है या लंबे समय तक रहने से कई पुरातात्विक संस्कृतियाँ मिल सकती हैं। विभिन्न संस्कृतियों की क्रमिक उपस्थिति उनके कालानुक्रमिक क्रम को दर्शाती हैं। भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न पुरातात्विक संस्कृतियों में हड़प्पा संस्कृति, चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति, ज़ोरवे संस्कृति आदि शामिल हैं।

पुरातात्विक उत्खनन मुख्य रूप से विभिन्न अवधियों से संबंधित अवशेषों के कालानुक्रमिक संदर्भों को समझने के लिए स्तरविज्ञान की अवधारणा को नियुक्त करता है। भूविज्ञान से व्युत्पन्न, स्तरीकरण की अवधारणा स्तरीकरण की प्रक्रिया पर आधारित है। भूविज्ञान में तलछट परतें या जमाव बहुत धीरे-धीरे एक दूसरे पर जमा होती हैं। इस प्रक्रिया में जो परत नीचे होती है, वह पहले जमा होती है और बाद में जमा होने वाली परतें बाद के काल की होती हैं। इसे अधीक्षण के नियम के रूप में जाना जाता है। पुरातात्विक स्थलों पर सांस्कृतिक और प्राकृतिक मलबा तेज़ी से बनता है। भूवैज्ञानिक परतें धीरे-धीरे बनती हैं। लेकिन दोनों ही अधीक्षण के कानून का पालन करते हैं। इसलिए, पुरातात्विक स्थलों में पहली बसावट के लक्षण सबसे निचले स्तर पर पाए जाते हैं और जैसे-जैसे निक्षेप जमा होता है और शीर्ष तक पहुँचता है तब हम बसावट का क्रम देख सकते हैं सबसे हाल की परत सतह के पास होती है।

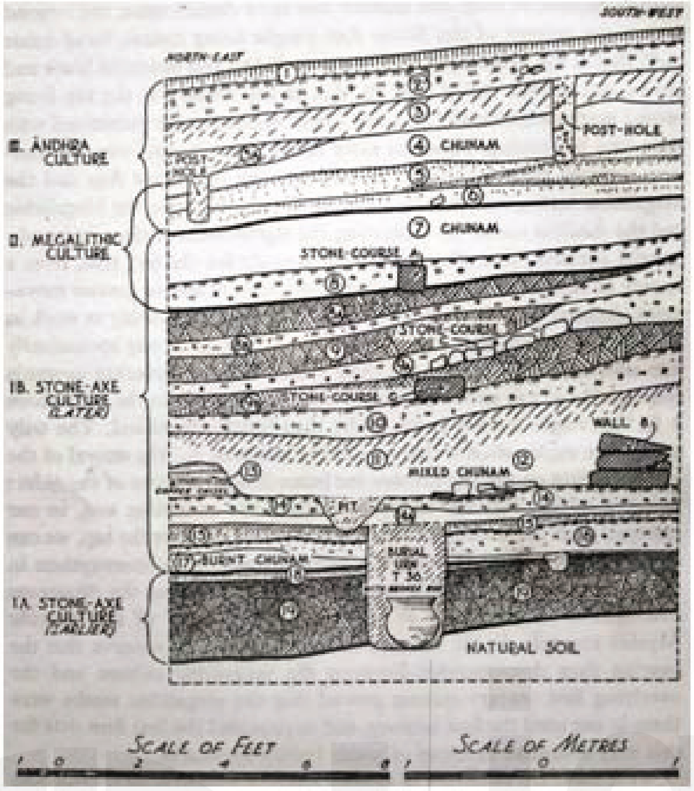

ब्रह्मगिरि, मैसूर राज्य, भारत में अनुभाग (Section)। इसमें तीन सांस्कृतिक चरण दिखाई दे रहे हैं। श्रेयः सर मोर्टिमर व्हीलर, आर्कयोलॉजी फ्रॉम द अर्थ (1954), मुंशीराम मनोहरलाल पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, द्वारा पुनःप्रकाशित, 2004, पृ. 50।

उद्देश्यों के आधार पर उत्खनन के दो प्राथमिक तरीके हैं जिनसे पुरातात्विक स्थलों की खुदाई की जा सकती हैः

i) क्षैतिज, और

ii) ऊर्ध्वाधर

इसकी अंतर्निहित धारणा यह है कि, मोटे तौर पर, समकालीन गतिविधियाँ क्षैतिज स्थान पर विद्यमान होती हैं और समय-समय पर इसमें बदलाव होते रहे हैं। इसलिए, यदि हम स्थल के किसी विशेष चरण के बारे में विस्तार से जानना चाहते हैं कि लोग कैसे रहते थे, तो स्थल की क्षैतिज रूप से खुदाई की जा सकती है। क्षैतिज खुदाई में स्थल के एक बड़े हिस्से के एक विशेष चरण के समकालीन संरचनाओं और गतिविधियों को उजागर करने के लिए धीरे-धीरे खुदाई की जाती है। इसके विपरीत, ऊर्ध्वाधर खुदाई में छोटे क्षेत्रों की खुदाई की जाती है। इसमें जमाव के माध्यम से प्राकृतिक मिट्टी के उस स्तर तक खुदाई की जाती है, जहाँ उस ज़मीन पर सबसे पहले बसावट हुई थी। इस तरह ऊर्ध्वाधर खुदाई से हमें पुरातात्विक स्थलों पर हुए कालानुक्रमिक परिवर्तनों की एक झलक देखने को मिल जाती है। दूसरे शब्दों में, ऊर्ध्वाधर उत्खनन से हमें पुरातात्विक स्थलों पर हुए विभिन्न सांस्कृतिक चरणों की क्रमिक बसावट के बारे में पता चलता है। अतएव दोनों प्रकार की खुदाई की विधियों में उनकी खूबियाँ और सीमाएँ दोनों हैं।

पुरातत्विक उत्खनन एक विनाशकारी प्रक्रिया है क्योंकि इसमें चीजों को उजागर करने के लिए पुरातत्विक जमाव को हटाने की आवश्यकता होती है। यह एक अपरिवर्तनीय प्रक्रिया भी है, जिसमें एक बार खुदाई के बाद जमाव को पुनः ठीक नहीं किया जा सकता है। इसलिए, पुरातत्वविद् तथ्यों के विवरण और रिकॉर्डिंग में अत्यधिक सावधानी रखते हैं। खुदाई के बाद पाया गया विवरण ही अध्ययन के आगे की प्रक्रिया को जारी रखता है।

उत्खनन से मिली विभिन्न प्रकार की सामग्रियों से बीते हुए युगों के बारे में पता चलता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ये सामग्रियाँ हमें बताती हैं कि लोग किस तरह के घरों में रहते थे। इस तथ्य-संकलन से कई प्रश्न पूछे जा सकते हैं जैसेः

- पक्की ईंटें अथवा छप्पर वाले ढांचे कैसे बने थे?
- क्या उनकी बस्तियों में कुएँ, टैंक, स्नानघर, शौचालय, भंडारण स्थान, जल निकासी, धर्मस्थल या पूजा स्थल आदि थे?
- उन्होंने किस तरह के औज़ारों का इस्तेमाल किया?
- क्या वे लंबी दूरी के व्यापार में लगे थे?
- उनकी सामाजिक और राजनीतिक प्रणाली क्या रही होगी?
- उन्होंने अपने मृतकों के साथ कैसा व्यवहार किया?

मानव द्वारा बनाई और उपयोग की गई सामग्रियाँ प्राचीन मानव जीवन के कई और पहलुओं को प्रकाशित करती हैं।

पुरातात्विक अन्वेषण और उत्खनन द्वारा इकट्ठा किए गए तथ्य हमें अतीत को समझने में काफी मदद करते हैं। पुरावशेषों को संग्रह करने के बाद पहली प्रक्रिया वर्गीकरण की है। पुरातात्विक सामग्री को उनकी बसावट, लम्बाई-चौड़ाई के अनुसार वर्गीकरण किया जाता है। उदाहरण के लिए मिट्टी के बर्तनों का वर्गीकरण उनके विभिन्न गुणों जैसे उनका आकार, उनको बनाने में उपयोग की गई मिट्टी, उनके सतह की बनावट आदि पर किया जाता है। यह हमें उनके प्रयोजन, जैसे खाना पकाने के लिए या अनुष्ठानिक उपयोग के लिए, के बारे में जानकारी देता है।

2.4 साक्ष्य का विश्लेषण

अब आप देखेंगे कि पुरातात्विक निष्कर्ष निकालने के लिए अवशेष और पर्यावरणीय तथ्यों का अध्ययन कैसे किया जाता है? इस भाग में वर्णन किया गया है कि पुरातात्विक स्थलों की तिथि कैसे निर्धारित की जाती है, किन वस्तुओं का व्यापार किया गया था, कौन-सी वनस्पतियाँ तथा पशु मौजूद थे आदि।

2.4.1 तिथि-निर्धारण की तकनीक

पुरातात्विक शोध में जो प्राथमिक सवाल उठता है वह यह है कि कोई विशेष वस्तु या पुरातात्विक स्थल कितना पुराना है। दूसरे शब्दों में, वे किस समय के हैं? टाइपोलॉजी, स्तरीकृत अनुक्रम और शैलीगत विश्लेषण जैसे पारंपरिक तरीकों से कालक्रम के बारे में व्यापक निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। इसे सापेक्ष तिथि-निर्धारण (Relative Dating) के रूप में जाना जाता है। पेड़ों में वलयों की वार्षिक वृद्धि, तिथि-निर्धारण के लिए भी इस्तेमाल की जा सकती है, जिसे ट्री-रिंग डेटिंग या डेंड्रोक्रोनोलॉजी अर्थात वृक्ष-वलय तिथि-निर्धारण के रूप में जाना जाता है। हालांकि नई वैज्ञानिक तकनीकों के आगे बढ़ने से हम अब और अधिक सटीक तिथि-निर्धारण करने में सक्षम हैं। पहली सफलता 1950 में तब मिली, जब विलार्ड लिब्बी ने लकड़ी या हड्डी जैसे कार्बनिक पदार्थों का तिथि-निर्धारण के लिए कार्बन-14 डेटिंग विधि विकसित की। सबसे हालिया और उन्नत विधि त्वरक द्रव्यमान स्पेक्ट्रोमेट्री (एएमएस) डेटिंग तकनीक वह है जिसके परिणाम प्राप्त करने के लिए बहुत छोटे नमूने की आवश्यकता होती है। यह तिथि-निर्धारण तकनीक उन कार्बनिक पदार्थों की तिथि-निर्धारण कर सकती है जो 50,000 साल पुराने हैं। अन्य तिथि-निर्धारण तकनीकों जैसे पोटेशियम-आर्गन, यूरेनियम-श्रृंखला, विखंडन ट्रैक, थर्मो-ल्यूमिनेसेंस (टीएल) और ऑप्टिकल तिथि-निर्धारण, इलेक्ट्रॉन

स्पिन प्रतिध्वनि (ईएसआर) और इसी तरह विभिन्न सामग्रियों का उपयोग करके 50,000 से लेकर 5 करोड़ वर्ष तक की तिथियों को बताया जा सकता है। किसी वस्तु या नमूने के तिथि-निर्धारण करने का मूल आधार यह है कि प्राप्त तिथियों को पूरे जमाव या संदर्भ पर लागू किया जा सकता है जिसमें यह पाया गया था। इस प्रकार, पूरा जमाव ही नमूने जितना ही पुराना माना जाता है।

तिथि-निर्धारण विधि	सामग्री	काल
ट्री-रिंग (वृक्ष-वलय)	वृक्षों के वलय वाली लकड़ी	लगभग 10,000 वर्ष बी.सी.ई. (भिन्न क्षेत्रों में)
रेडियोकार्बन	कार्बन वाले कार्बनिक पदार्थ या जैविक पदार्थ	50, 000 वर्ष बी.सी.ई.
पोटेशियम-आर्गन / आर्गन आर्गन	ज्वालामुखीय चट्टानें	80,000 वर्ष बी.सी.ई. से अधिक पुरानी
यूरेनियम-श्रृंखला	कैल्शियम कार्बोनेट से समृद्ध चट्टानें; दांत	10,000–500,000 वर्ष बी.सी.ई.
थर्मो-ल्यूमिनेसेंस (टीएल डेटिंग)	पकाए हुए मृदभाण्ड, मिट्टी, पत्थर	100,000 बी.सी.ई. तक
पेलोमैग्नेटिक डेटिंग	चुम्बकित अवसादन, ज्वालामुखीय लावा, मिट्टी को 650-700° c तक जले हुए	हज़ारों साल पहले से लेकर लाखों साल पहले तक के बहुत पुराने जमाव
इलेक्ट्रॉन स्पिन प्रतिध्वनि (इएसआर)	हड्डी, खोल, दाँतों की परत	हजारों साल पहले से लेकर लगभग दस लाख साल पहले तक
विखंडन ट्रैक	कुछ प्रकार की चट्टानें, और खनिज, लावा, कांच, अभ्रक आदि	सैकड़ों हजारों साल पहले से लेकर लाखों साल पहले तक

रैनफ्रियु, सी. और बान. पी., 2012 से अनुकूलित।

2.4.2 उत्पादन तकनीक और प्रक्रियाएँ

अन्वेषण और उत्खनन के माध्यम से विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को बरामद किया जाता है। पुरातत्व हमें सूचित करता है कि वे कैसे बनाए गए थे, अर्थात् उनकी उत्पादन प्रक्रियाएँ और उनका उपयोग कैसे किया गया था। पुरावशेषों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:

i) अपरिवर्तित, और

ii) परिवर्तित

अपरिवर्तित श्रेणी की वस्तुओं के स्वभाव में एक समय के बाद बदलाव नहीं होता है। जैसे कि पत्थर के औज़ार, लकड़ी की वस्तुएँ, पौधे और जानवरों के तंतु आदि। परिवर्तित वस्तुओं में ऐसी सामग्रियाँ शामिल होती हैं जो उत्पादन प्रक्रिया के दौरान स्वभाव और रूप में बदलाव मिलती हैं। लगभग ऐसी सामग्रियों के उत्पादन में गर्मी के नियंत्रण की आवश्यकता होती है, जैसे मिट्टी के बर्तन और धातु की वस्तुएँ आदि।

जातीय-पुरातत्व (ethno-archaeology) और प्रयोगात्मक पुरातत्व (experimental-archaeology)

हमें यह पता लगाने में मदद करते हैं कि ऐसी वस्तुएँ कैसे बनाई गईं और उनका कार्य क्या था। मिट्टी के बर्तनों की उत्पादन प्रक्रिया अब एक उदाहरण के रूप में वर्णित है। मिट्टी नरम होती है और मिट्टी के बर्तनों को बनाने के लिए उपयोग में लाई जाती है। मिट्टी के बर्तनों की उत्पादन प्रक्रिया मिट्टी प्राप्त करने से लेकर अंत में तैयार उत्पाद प्राप्त करने तक उत्पादन के कई चरणों से गुजरती है। जातीय-पुरातत्व और प्रयोगात्मक पुरातत्व के माध्यम से हम उत्पादन प्रक्रिया के कई विवरणों का पता लगा सकते हैं, जैसे कि मिट्टी के बर्तन हस्तनिर्मित थे या उन्हें बनाने में चाक का इस्तेमाल किया गया था। आकार और मिट्टी में कुछ बर्तन दूसरों से अलग क्यों हैं? विभिन्न बर्तनों का उपयोग किन उद्देश्यों के लिए किया गया था? इस तरह के सवालों के जवाब जातीय-पुरातत्व और प्रयोगात्मक पुरातत्व के माध्यम से दिए जा सकते हैं।

जातीय पुरातत्व

जातीय पुरातत्व वह पद्धति है जो वर्तमान समुदायों का अध्ययन कर के पुरातात्विक रिकॉर्ड को समझने के लिए अपनाई जाती है। इस विधि में किसी विशेष गतिविधि से सम्बन्धित प्रक्रिया का अवलोकन करके यह समझने का प्रयास किया जाता है कि पुरातात्विक रिकार्ड में ये गतिविधियाँ किस प्रकार का पैटर्न उत्पन्न कर सकती है। उदाहरण के लिए, वर्तमान में पारंपरिक मिट्टी के बर्तनों के उत्पादन की तकनीक का अध्ययन करने से प्राचीन मिट्टी के बर्तनों को समझने में मदद मिल सकती है। उत्पादन के चरणों के दौरान विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा छोड़ी गई प्राचीन मिट्टी के बर्तनों पर पैटर्न को समझने में संचालन के अनुक्रम (chane operatoire) उपयोगी सिद्ध होते हैं। पुरातत्व विज्ञान में विभिन्न प्रकार के अध्ययनों में जातीय पुरातत्व विधियों को नियोजित किया गया है। इसमें शिकार, संग्रह, जैसी निर्वाह तकनीकों के बारे में जानकारी शामिल है। और वे विभिन्न शिल्प परम्पराओं को समझने में अधिक लोकप्रिय है। इस प्रकार, पुरातात्विक सवालों का जवाब देने के लिए वर्तमान में समुदायों की प्रथाओं का अध्ययन करना जातीय पुरातत्व विज्ञान के लिए सामान्य है।

प्रयोगात्मक पुरातत्व

प्रयोगात्मक पुरातत्व के तहत, प्राचीन व्यवहार प्रक्रियाओं को समझने के लिए पुरातत्वविद् नियंत्रित स्थितियों के तहत प्रयोगात्मक पुनर्निर्माण को दोहराने का प्रयास करते हैं। जातीय-पुरातत्व के विपरीत, जहाँ वर्तमान में विशेष वस्तुओं का निर्माण करने वाले समुदायों द्वारा किए गए कार्यों का अवलोकन किया जाता है, पुरातत्वविद् खुद इन प्रयोगों को करते हैं। औज़ारों के लिए पत्थर को तराशने में प्रयोगात्मक पुरातत्व सफलतापूर्वक लागू किया गया है जिसने यह समझने में मदद की है कि पत्थर के उपकरण बनाने के लिए मूल पत्थर से परतें कैसे उतारी जाती हैं। कई अन्य अध्ययन किए गए हैं, जिनमें प्रक्रियाओं का पुनर्निर्माण शामिल है, जैसे इंग्लैंड के स्टोनहेंज में विशाल चट्टानों को कैसे खींचा गया और स्टोनहेंज का निर्माण किस तरह हुआ।

स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप (SEM) जैसी माइक्रोस्कोपकी तकनीक वस्तुओं पर छोड़े गए कार्यों के निशान या माइक्रोवेयर पैटर्न का अध्ययन करती है। इससे प्रयोगों के सूक्ष्म चिन्हों की तुलना आधुनिक प्रयोगों के साथ की जा सकती है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि उन्हें कैसे बनाया गया था। पौधों के रस जैसे कार्बनिक अवशेषों के निशान उपकरणों पर पाए जा सकते हैं। यदि उन्हें कटाई के लिए इस्तेमाल किया गया था, तो उनका भी अध्ययन किया जा सकता है।

विभिन्न प्रश्नों के उत्तर देने के लिए विभिन्न तकनीकों का उपयोग एक ही नमूने पर किया जा सकता है। कभी-कभी, धातु की वस्तुओं को दो धातुओं को मिलाकर बनाया जाता है। ट्रेस

एलीमेंट एनालिसिस का उपयोग करके यह पता लगाया जा सकता है। प्राचीन धातु की वस्तुओं की सूक्ष्म धातु विज्ञान संबंधी जाँच हमें बताती है कि पुरातात्विक वस्तुएँ बनाने के लिए ढलाई, हथौड़ा (कोल्ड हैमरिंग) आदि किस तकनीक का उपयोग किया जाता था। इस तरह की वस्तुएँ हमें प्राचीन तकनीक और ज्ञान के स्तर के पायरो-प्रौद्योगिकी के बारे में सूचित करती हैं। दिल्ली के कुतुब कॉम्प्लेक्स में स्थित लगभग 4वीं शताब्दी सी.ई. में बने जंग रहित महरौली लोहे के खंभे अतीत की ऐसी तकनीक की दक्षता का एक अच्छा उदाहरण है।

2.4.3 व्यापार और विनिमय

पुरातत्व के माध्यम से हम समझ सकते हैं कि विभिन्न समुदाय भूमि अथवा समुद्र के मार्ग द्वारा किए जाने वाले व्यापार में कैसे लगे? जब हम कच्चे माल से बने उन अवशेषों को ढूंढते हैं जो स्थानीय रूप से नहीं पाए जाते थे, तो यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वे व्यापार के माध्यम से आए थे। ऐसी वस्तुओं का वितरण पैटर्न हमें उस भौगोलिक सीमा के बारे में बताता है जहाँ व्यापार फैला हुआ था। पेट्रोग्राफिक परीक्षा और ट्रेस एलीमेंट एनालिसिस, एक्स-रे फ्लुओरेसेन्स (एक्सआरएफ) और एक्स-रे डिफ्रेक्शन (एक्सआरडी) जैसी तकनीक स्थानीय को गैर-स्थानीय वस्तुओं से अलग कर सकती है और उस क्षेत्र की ओर भी इशारा करती हैं, जहाँ वे वस्तुएँ मूल रूप से पाई जाती थीं। उदाहरण के लिए, भारत में पुरातात्विक स्थलों पर पाए जाने वाले एम्फ़ोरा, जो लगभग 2000 साल पहले इंडो-रोमन साम्राज्य के व्यापार में शामिल थे, उन एम्फ़ोरा के अध्ययनों के माध्यम से हम रोमन साम्राज्य के उस क्षेत्र को सीमित कर सकते हैं, जहाँ से विभिन्न एम्फोरा भारत पहुँचे थे। इस तरह के अध्ययन हमें प्राचीन व्यापार मार्गों और नेटवर्क के बारे में भी बताते हैं।

2.4.4 पर्यावरणीय पुरातत्व

विकास के प्रारंभिक चरणों से ही मानव लगातार बदलते परिवेश में जी रहा है। अतीत में कई हिम युगों के उतार-चढ़ाव वाले वातावरण ने उन्हें प्रभावित किया। अतीत के वातावरण का वैश्विक स्तर पर पुनर्निर्माण पुरातत्व द्वारा किया जा सकता है। समुद्री तल की तलछट और स्तरीकृत बर्फ की चादरों पर हज़ारों वर्षों के जलवायु इतिहास के प्रमाण हैं। कोर के समस्थानिक विश्लेषण के द्वारा गहरे समुद्र के तल और स्तरीकृत बर्फ की चादरों से प्राचीन तापमान, बारिश और हवा के पैटर्न का पता लगाया जा सकता है।

पुरातत्व-वनस्पति विज्ञान और पुरातत्व-जीव विज्ञान : पुरातात्विक स्थलों में पौधे और जानवरों के अवशेष होते हैं जो हमें बताते हैं कि मानव ने इन का कैसे प्रयोग किया और उनके साथ मिलकर काम किया। प्राचीन पौधों के अवशेषों के अध्ययन को पुरातत्व-वनस्पति विज्ञान कहा जाता है। पुरातात्विक स्थलों पर पाए जाने वाले पौधों के अवशेषों को स्थूल और सूक्ष्म वनस्पति अवशेषों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

i) स्थूल-वनस्पति (Macro-botanical) के अवशेष नग्न आंखों द्वारा देखे जाने के लिए पर्याप्त बड़े होते हैं। वे आमतौर पर अनाज, बीज, फल आदि के रूप में जीवित रहते हैं, जो गलती से या जानबूझकर जला दिए गए होते हैं। खुदाई के दौरान वे एक जाली के माध्यम से खुदाई की गई सूखी या गीली मिट्टी के छानने के द्वारा पाए जाते हैं। एक अन्य तकनीक जिसे फ्लोटेशन कहा जाता है, उसमें मिट्टी के नमूनों को पानी और हल्के कार्बनिक पदार्थों में मिलाया जाता है जो तैरते हुए अलग हो जाते हैं। इनके सूखने के बाद उनका परीक्षण किया जाता है। कभी-कभी, पौधे के अवशेष या उनकी छापों को मिट्टी के बर्तनों, ईंटों या मलबे के अवशेषों में देखा जा सकता है। जो लकड़ी के टुकड़ों में मिलते हैं, उनकी प्रजातियों की पहचान करने के लिए स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप (SEM) के माध्यम से उनके माइक्रोस्ट्रक्चर का विश्लेषण किया जा सकता है।

ii) सूक्ष्म वनस्पति अवशेषों को नग्न आँखों से नहीं देखा जा सकता है और उन्हें स्थल पर

व्यवस्थित रूप से लिए गए मिट्टी के नमूनों से निकाला जाता है। सूक्ष्म वनस्पति अवशेषों के दो प्रमुख विश्लेषण हैंः

अ) पराग विश्लेषण या पैलिनोलॉजी, और ब) फाइटोलिथ विश्लेषण।

पराग कणों के अध्ययन से वनस्पति में उतार-चढ़ाव की जानकारी मिलती है। कि क्या अधिक पेड़ों या खुली घास के मैदानों के साथ वन भूमि थी? फाइटोलिथ पौधों की कोशिकाओं से प्राप्त सिलिका के कण हैं जो प्राचीन अवसादों में अच्छी तरह से जीवित रहते हैं। वे आमतौर पर राख, मिट्टी के बर्तनों, प्लास्टर, पत्थर के औज़ारों और यहाँ तक कि जानवरों के दांतों की परतों में पाए जाते हैं। फाइटोलिथ्स का अध्ययन हमें मनुष्यों द्वारा विभिन्न पौधों के उपयोग के बारे में बताता है।

पुरातात्विक स्थलों पर पाए जाने वाले पशु अवशेषों के माध्यम से पर्यावरण का पुनर्निर्माण भी किया जा सकता है। प्राचीन काल के अवशेषों के अध्ययन को ज़ूआर्कयोलॉजी कहा जाता है। पशु अवशेष निम्न में विभाजित हैंः

- सूक्ष्म जीव, और
- स्थूल जीव।

सूक्ष्म जीवों में विभिन्न प्रकार के कीटभक्षी, कृंतक, चमगादड़, पक्षी, मछली और मोलस्क आदि शामिल हैं। वे पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। यह उन पर्यावरणीय परिस्थितियों के आधार पर संपन्न होता है, जिनके लिए उन्हें प्रजनन और पनपने की आवश्यकता होती है। स्थूल जीवों में बड़े जानवरों के अवशेष शामिल हैं जो आम तौर पर पुरातात्विक स्थलों पर मौजूद हैं। वे पुरातात्विक स्थलों के वातावरण में मौजूद प्रजातियों की संख्या का पता लगाने में मदद करते हैं। वे पर्यावरण के बहुत अच्छे संकेतक नहीं माने जाते क्योंकि वे विभिन्न प्रकार के पौधों पर पनप सकते हैं और तापमान में व्यापक बदलाव का सामना कर सकते हैं।

2.4.5 आहार और जीवन निर्वाह

पर्यावरण के बारे में जानकारी के अलावा, पौधे और जानवरों के अवशेष अतीत में लोगों के आहार और निर्वाह की जानकारी देते हैं। आहार से तात्पर्य लंबी अवधि में उपभोग के पैटर्न से है। कई तरीकों से हम यह निर्धारित कर सकते हैं कि अतीत में मनुष्यों का आहार कैसा रहा होगा? कुछ अनाज जैसे गेहूँ, जौ, मक्का, चावल, सूखने या जलाने से संरक्षित स्थूल हो जाते हैं। खाना पकाने के बर्तनों के रासायनिक अवशेषों के विश्लेषण से पके हुए भोजन की पहचान की जा सकती है कि वह अनाज या फलियों से संबंधित है या नहीं। उदाहरण के लिए, कुछ एम्फ़ोरा शड्र्स के विश्लेषण से साबित होता है कि इन भंडारण के बर्तनों में शराब और जैतून का तेल रखा जाता होगा।

एम्फ़ोरा शड्र्स केरल के पट्टानम से खुदाई में मिले थे। श्रेयः केरल काउंसिल फॉर हिस्टोरिकल रिसर्च, तिरुवनंतपुरम।

पौधे के अवशेष की तरह पशु अवशेष भी मानव आहार के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। हालांकि, जानवरों की हड्डियाँ पुरातात्विक स्थलों पर अलग-अलग कारणों से आ सकती हैं और यह हमेशा मानव उपभोग से संबंधित नहीं है। इसलिए, केवल उन जानवरों को मनुष्यों द्वारा उपभोग किया गया माना जाता है, जिनकी हड्डियों पर मानव द्वारा काटने के निशान मिलते हैं।

बहुत ही कम उदाहरणों में, मानव अवशेष प्रत्यक्ष रूप से इस बात का प्रमाण देता है कि मानव ने बने और तैयार भोजन के रूप में क्या खाया। व्यक्तिगत भोजन के बारे में जानकारी पेट की सामग्री के विश्लेषण और जीवाश्म मानव मल के अध्ययन के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। ममीकृत निकायों को छोड़कर पेट की सामग्री शायद ही कभी बचती है। इसी तरह, जीवाश्म मल, जिसे 'कोप्रोलाइट' और उसके अध्ययन को 'कोप्रोलोजी' के नाम से जाना जाता है, अतीत में लोगों ने क्या खाया, इसके बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। कॉप्रोलाइट्स में विभिन्न प्रकार के स्थूल अवशेष होते हैं जैसे हड्डी के टुकड़े, पौधे के फाइबर, लकड़ी का कोयला, बीज, मछली के अवशेष, पक्षी, सीप के टुकड़े आदि।

जैव पुरातत्व

जैसा कि देखा गया है, मानव अवशेष के जीवाश्म से क्या खाया गया था, के बारे में जानकारी प्रदान कर सकते हैं। भोजन से प्राप्त पोषण को निर्धारित करने के लिए अन्य तकनीकों जैसे आइसोटोपिक तकनीकों का उपयोग हड्डियों पर किया जाता है। यह शरीर में विभिन्न खाद्य पदार्थों द्वारा छोड़े गए रासायनिक हस्ताक्षरों के अध्ययन पर आधारित है जो दाँतों और हड्डियों में दिखाई देते हैं। नाइट्रोजन आइसोटोप 15N और 14N, 15N और 13C के अनुपात की तुलना शाकाहारी और माँसाहारी आहार का संकेत देती है। इसी तरह, बच्चों में माँ का दूध छोड़ने की उम्र का निर्धारण नाइट्रोजन के विश्लेषण के माध्यम से किया जा सकता है, जैसा कि इनामगांव के स्थल पर किया गया है, जिसकी चर्चा बाद के भाग में की गई है। तत्व स्ट्रोंटियम की सांद्रता भी आहार पर तथ्य-संकलन प्रदान करती है। शाकाहारी लोगों की हड्डियों में स्ट्रोंटियम की उच्च सांद्रता के संकेत मिलते हैं।

सामाजिक जानकारी के लिए कब्रें एक बहुत महत्वपूर्ण स्रोत है। आमतौर पर, कब्रों में दफनाने के साथ कुछ सामान शामिल होते हैं, जो किसी व्यक्ति की हैसियत को दर्शाते हैं और कब्रों के सामान की तुलना हमें सामाजिक अंतर के बारे में बताती है। कब्रों में मूल्यवान वस्तुओं की उपस्थिति व्यक्ति की उच्च स्थिति का सुझाव देती है। मूल्य का पता लगाने का एक साधन यह है कि कब्र में रखा हुआ सामान दुर्लभ हैं, उन्हें दूर-दूर से कारोबार करके लाया गया होगा। उदाहरण के लिए, मेसोपोटामिया में उर के शाही कब्रों में हड़प्पा की लंबी बैरल कार्नेलियन मोती पाए गए हैं। मुखिया तंत्र और राज्य व्यवस्था में यह अंतर अत्यधिक चिह्नित है। किसी व्यक्ति द्वारा अपने जीवनकाल में उच्च दर्जा प्राप्त किया गया होगा। हालाँकि, उच्च स्थिति आनुवंशिकता के मामले में भी संभव हो सकती है। बहुमूल्य सामान के साथ बच्चों के कब्र ऐसे मामलों को दर्शाते हैं।

2.4.6 प्राचीन समाजों की जाँच-परख

पुरातात्विक विधियाँ प्राचीन मानव समाजों के सामाजिक पहलुओं की जाँच करने में भी मदद करती हैं। प्राचीन समाजों की प्रकृति और पैमाने को समझने के लिए मानवविज्ञानी एलमैन सर्विस ने समाजों का चार भागों में वर्गीकरण किया:

i) घुमक्कड़ शिकारी समूह,

ii) खंड समाज (segmentary),

iii) मुखिया तंत्र, और

iv) राज्य व्यवस्था

हालाँकि पुरातत्वविदों द्वारा आलोचना की गई है, लेकिन कुछ संशोधनों के साथ इस ढाँचे का व्यापक रूप से उपयोग किया जा सकता है। उनके बस्ती विश्लेषण और उत्खनन के आधार पर अंतर के बारे में पता लगाया जा सकता है। घुमक्कड़ शिकारी समूहों की बस्तियाँ अस्थायी शिविर हैं, खंड समाज के स्थायी गाँव, मुखिया तंत्र के किलेदार केंद्र, और अनुष्ठान केंद्र और राज्य व्यवस्था शहरों, कस्बों और सीमांत सुरक्षा द्वारा चिह्नित की जाती है।

दूरस्थ अतीत में मनुष्यों के संज्ञानात्मक पहलुओं को प्रकट करने में पुरातत्व ने भी प्रगति की है। दूसरे शब्दों में, अब हम अतीत में "मनुष्यों" द्वारा छोड़े गए भौतिक साक्ष्यों का व्यवस्थित रूप से विश्लेषण के द्वारा मनुष्य की सोच के बारे में जान सकते हैं। भाषा जो प्रतीकों और ध्वनियों का इस्तेमाल करती है, मानव की इन चिन्हों के प्रयोग करने की क्षमता की ओर संकेत करती है। पुरातत्वविदों का मानना है कि कुछ भाषाएँ होमो-हेबिलिस तथा होमो-इरेक्टस द्वारा विकसित की गई थी। यह उनके सुडौल और सुंदर ऐशुलियन हाथ-कुल्हाड़ियों द्वारा परिलक्षित होता है। बड़ी संख्या में इस तरह की हाथ-कुल्हाड़ियों का उत्पादन करने की क्षमता एक प्रभावी संचार प्रणाली की उपस्थिति का सुझाव देती है। अपने मृतकों को दफनाने की प्रणाली भी एक विश्वास की धारणा की ओर संकेत करती है।

पाषाण कला का अध्ययन अतीत के बारे में बहुमूल्य जानकारी देता है। चित्रों और नक्काशियों में विषयवस्तु की एक विस्तृत श्रृंखला जैसे निर्वाह प्रथाओं, मानव आकृतियों, जानवरों, पौधों, पारिवारिक दृश्यों, सामाजिक गतिविधियों से लेकर कर्मकांड के पहलुओं तक को दर्शाया जा सकता है। चित्रकारी भी अमूर्त पैटर्न दर्शाती हैं जो मनुष्य की मान्यताओं का प्रतीक हो सकता है। पुरातत्वविदों ने पाषाण कला बनाने के औचित्य के बारे में कई स्पष्टीकरण दिए हैं।

बाएँः भोपाल, मध्य प्रदेश के पास शैल गुफा 8, भीमबेटका में चित्रकारी। ए.एस.आई. स्मारक संख्या एन.एम.पी. 225। श्रेयः डॉ. अभिषेक आनन्द।

दाएँः शैल गुफा 3, भीमबेटका में चित्रकारी। श्रेयः डॉ. अभिषेक आनन्द।

धर्म, अस्तित्व का एक अभिन्न अंग है और पुरातत्व प्राचीन धार्मिक प्रथाओं को समझने में मदद करता है। यह धार्मिक संरचनाओं के सबूतों की विभिन्न श्रेणियों का उपयोग करता है, जैसे डेल्फी में अपोलो का मंदिर, सांची स्तूप आदि। कुछ पुरातात्विक स्थलों पर खुदाई के दौरान मिली मूर्तियों की पूजा की गई होगी। जहाँ पर देवी-देवताओं की मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं, वे स्थान पूजा के स्थल माने जाते हैं। उत्खनन के जरिये उन पवित्र स्थानों को सावधानी से चुना जाता है, जैसे बाघोर के प्रागैतिहासिक मंदिर।

हाल ही में, आणविक आनुवंशिकी ने पुरातत्व को प्रभावित किया है। विभिन्न सामाजिक समूहों और वंशावली के आनुवंशिक संबंधों को फिर से संगठित करने के लिए प्राचीन दफन के डीएनए विश्लेषण का उपयोग किया जा रहा है। डीएनए विश्लेषण पर आधारित जीनोग्राफिक

परियोजनाओं ने स्थापित किया है कि पृथ्वी पर पूरी मानव आबादी का एक साझा वंश है, जो होमो-सेपियंस की शाखा है, जो अफ्रीका में विकसित हुई और अफ्रीका से बाहर चली गई है। स्ट्रोंटियम आइसोटोप विश्लेषण का उपयोग अतीत में पलायन को समझने में भी किया गया है। स्ट्रोंटियम आइसोटोप विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में भिन्न होते हैं जो दाँतों पर अलग-अलग रासायनिक हस्ताक्षर छोड़ते हैं। ये रासायनिक हस्ताक्षर लोगों के आवागमन को भी चित्रित करने में मदद करते हैं।

2.4.7 जल मग्न पुरातत्व

जल मग्न पुरातत्व, पुरातत्व की एक शाखा है जो उन बस्तियों की जाँच करती है जो पानी के नीचे डूब गई हैं, जैसे कि अतीत में झील-रेत तटों के पास स्थित बस्तियाँ। समुद्र या झील के स्तरों में वृद्धि के कारण कुछ हिस्से या पुराने बंदरगाहों का पूरा क्षेत्र पानी के नीचे डूब गया है। जल मग्न पुरातत्व जहाजों की भी जाँच करता है। अनुभवी समुद्री पुरातत्वविदों को पुरानी बस्तियों, बंदरगाहों या जहाजों के अवशेषों का पता लगाने, खुदाई करने और तथ्य-संकलन करने के लिए कई गोते लगाने पड़ते हैं। कांस्य युग से ही विभिन्न भौगोलिक क्षेत्र समुद्री व्यापार नेटवर्क से जुड़े हुए थे। व्यापारिक जहाजों के ध्वस्त जहाज समय के कैप्सूल की तरह होते हैं जो विभिन्न उत्पादों के साथ डूब जाते हैं जिन्हें वे ले जा रहे थे। भूमध्य सागर में कई जहाज़ों की खोज की गई है जो लौह युग से ही यूरोप, उत्तरी अफ्रीका और लेवांत के क्षेत्रों के बीच व्यापार कर रहे थे। जल मग्न पुरातत्व के माध्यम से पुराने अलेक्जेंड्रिया के डूबे हुए हिस्सों, मिस्र और टाइटैनिक जैसे जहाजों की जाँच की गई है। भारत में भी समुद्री पुरातत्वविदों ने हड़प्पा काल के कुछ समय पहले का बेट द्वारका, जहाँ कुछ पत्थर की संरचनाओं और पत्थर के लंगर पाए गए हैं, की खोज की है।

समुद्र के किनारे की जगहों को खोजने के लिए जल मग्न पुरातत्व में जियोफिजिकल तरीकों का भी उपयोग किया जाता है। एक जहाज से संचालित, मल्टी-बीम साइड-स्कैन सोनार सर्वेक्षण जैसी तकनीकें स्पष्ट चित्र और जहाज के टुकड़ों का सटीक माप देती हैं।

बाएँ: श्रेय: हस्तकीय यूरोपीय विज्ञान फोटो प्रतियोगिता 20105, क्रियटिव कॉमन्स एट्रीब्यूशन – शेयर अलाईक 4.0, इंटरनेशनल लाईसेंस (विकिमीडिया कॉमन्स)।

दाएँ: जल मग्न पुरातत्व द्वारा मापा गया डूबे हुए जहाज का इंजन, श्रेय: द्वी सुमैय्या मखमुर। स्रोत: विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Underwater archaeology.jpg).

बोध प्रश्न 1

1) पुरातात्विक अन्वेषण और उत्खनन के बीच क्या अंतर है?

....

....

....

....

2) पुरातत्व विज्ञान में प्रयुक्त विभिन्न स्रोतों को सूचीबद्ध करें।

....

....

....

....

2.5 भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ प्रमुख पुरातात्विक स्थल

अब हम भारतीय उपमहाद्वीप के कुछ प्रमुख स्थलों पर पाए जाने वाले पुरातात्विक साक्ष्यों को देखेंगे। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि पुरातत्व किसी भी समयावधि तक सीमित नहीं है और तत्कालीन से लेकर समकालीन तक की भौतिक संस्कृति पर आधारित है।

- **भीमबेटका**

भीमबेटका मध्य प्रदेश के भोपाल के 45 किमी. दक्षिण-पूर्व में रायसेन जिले में स्थित है। इसकी खोज 1957 में वी. एस. वाकणकर ने की थी। यहाँ विंध्य पहाड़ियों के बलुआ पत्थर की संरचनाओं में 700 से अधिक गुफाओं और शैल गुफाओं का एक परिसर है। स्थल पर नियमित उत्खनन ने पुरापाषाणकाल से मध्यपाषाणकाल तक एक लंबे अनुक्रम को नियमित रूप में प्रकट किया है। मध्यपाषाणकाल के बाद कुछ मानवीय उपस्थिति और गतिविधियाँ ऐतिहासिक अवधि तक रुक-रुक कर जारी रहीं। भीमबेटका में सभी ऐतिहासिक चरणों में मध्यपाषाणकाल अवधि बहुत अच्छी तरह से अपने लघुपाषाण उद्योग के साथ परिभाषित है, और पाषाण कला की भव्यता के लिए जानी जाती है। भीमबेटका की पाषाण कला में मुख्य रूप से लाल गेरूआ में किए गए चित्र शामिल हैं। हालाँकि सफेद, पीले और हरे रंग का भी उपयोग किया गया है। ये चित्रकारी प्राकृतिक, आलंकारिक और अमूर्त कला का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनमें कई तरह के दृश्य शामिल हैं:

- शिकार,
- मछली पकड़ने,
- शहद संग्रह,
- नाच, और
- कुछ दृश्य ऐसे भी हैं जो शायद कबीले धर्म से संबंधित थे।

भीमबेटका में मध्यपाषाणकाल 7वीं सहस्त्राब्दी बी.सी.ई. तक कालबद्ध की जा सकती हैं। अपने सार्वभौमिक ऐतिहासिक महत्व के कारण भीमबेटका को 2003 में यूनेस्को की विश्व विरासत सूची में अंकित किया गया था।

- **मेहरगढ़**

भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे आरंभिक गाँव बस्तियों में से एक, मेहरगढ़ वर्तमान पाकिस्तान में बलूचिस्तान के पास, कच्छी मैदान के उत्तरी भाग के बोलन घाटी में स्थित है। मेहरगढ़ में खुदाई से 200 हेक्टेयर के क्षेत्र में बिखरे हुए सात व्यवसायिक स्तर का पता चला है।

काल-1 और काल-1 नवपाषाणकाल और इसके बाद के ताम्रपाषाणकाल के हैं। मेहरगढ़ में प्रारंभिक स्तरों में नवपाषाण की शुरुआत को 8वीं सहस्त्राब्दी बी.सी.ई. में रखा गया है। लोग हाथ से बने कच्ची ईंटों से बने छोटे आयताकार कमरों के घरों में रहते थे। पत्थर के औज़ारों में नवपाषाणकाल की ग्राउंड या पॉलिश की गई कुल्हाड़ियाँ मिलीं हैं, हालाँकि ब्लेड-आधारित लघुपाषाण के औज़ार प्रचुर मात्रा में है। घिसने के पत्थर और कुछ हड्डी के उपकरण जैसे कि सुतारी और सुइयाँ भी पाए गए हैं।

विस्तृत स्तर पर एक कब्रिस्तान पाया गया है। एक किनारे में एक कोना कटा हुआ है जिसमें शरीर और कब्र का सामान रखा गया है। इसे मिट्टी की ईंटों की एक दीवार द्वारा बंद कर दिया गया था। शरीर लाल गेरूआ से ढंका था, जो प्रजनन संबंधी विश्वास का ओर संकेत देता है। कब्र में रखे जाने वाले सामानों में बिटुमेन से लेपी गई टोकरी, ताम्र और सीप मनके आदि थे। कुछ कंकाल सर की पट्टी और कमर पर सीप मनकों के हारनुमा बेल्ट के साथ पाए गए हैं। इसमें फ़िरोज़ा और लाज़वर्द मनके भी हैं जो उत्तरी बलूचिस्तान और अफगानिस्तान से लाए गए होंगे। सीप की उत्पत्ति मकरान तट पर हुई होगी, जो लगभग 500 किमी, दूर है। इससे पता चलता है कि बहुत पहले ही व्यापारिक नेटवर्क स्थापित हो चुके थे।

मेहरगढ़ की शुरुआती अवधि में निर्वाह गतिविधियों के बारे में विशेष रूप से जानकारी प्राप्त होती है। इसमें शिकारी-संग्रहकर्ता जीवन पद्धति से पशुपालन की ओर संक्रमण दिखाई देता है। विभिन्न किस्म के पौधों के अवशेष यहाँ से एकत्रित किए गए हैं। इन पौधों की कटाई बिटुमेन में स्थापित पत्थर के ब्लेड से की जाती थी, इसका उपयोग संभवतः दरांती के रूप में किया जाता था। नवपाषाण काल में जानवर का शिकार करने से लेकर पशुपालन तक संक्रमण दिखाई देता है।

मेहरगढ़ का पुरातात्विक स्थल। पाकिस्तान में बी.ए 28 का स्मारक चित्र। श्रेयः एम. एच. तुरी। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Mehrgarh.jpg)।

- **हड़प्पा**

हड़प्पा पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में स्थित है। यह हड़प्पा सभ्यता का पहला पुरातात्विक स्थल था जिसकी 1920 में खुदाई की गई थी; इसलिए इसके नाम पर सभ्यता का नाम रखा गया। हड़प्पा के पुरातात्विक स्थल का आकार लगभग 150 हेक्टेयर है। यह रावी नदी के किनारे स्थित था, लेकिन अब यह नदी 10 किमी की दूरी पर बहती है। हड़प्पा दुर्ग ऊँचे टीलें पर स्थित है और बाकी शहर निचले टीले पर स्थित है। मोटे तौर पर समांतर चतुर्भुज के आकार का गढ़ मिट्टी की ईंट की दीवार से घिरा हुआ है। इसमें बड़े बुर्ज और द्वार हैं। एक अन्न भंडार, 18 गोलाकार फर्श और कामगार के क्वार्टर की पहचान माउंड एफ के उत्तर में की गई है। निचले शहर के क्षेत्रों में विभिन्न कार्यशालाओं का पता चला है जहाँ सीप, तांबा, गोमेद की वस्तुओं को बनाया गया था। निचले शहर के कुछ हिस्सों में घरों, नालियों, स्नानागारों आदि का पता चला है। हड़प्पा में गढ़ टीले के दक्षिण में दो कब्रिस्तान – कब्रिस्तान एच और आर-37 हैं।

हड़प्पा का पुरातात्विक स्थल। एएसआई स्मारक संख्या एन-पीबी -32। श्रेयः शेफाली। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ancient_Harappa_Civilisation.jpg)।

- **मोहनजोदड़ो**

हड़प्पा सभ्यता का सबसे बड़ा स्थल मोहनजोदड़ो पाकिस्तान के सिंध प्रांत में सिंधु नदी से 5 किमी. दूर स्थित है। स्थल का आकार लगभग 200 हेक्टेयर है। उच्च और निम्न शहर – दो टीले शामिल हैं। उच्च क्षेत्र, 400 × 200 मीटर के क्षेत्र में, एक कृत्रिम मिट्टी और कच्ची ईंटों के चबूतरे पर बनाया गया है। इस चबूतरे पर स्थित महास्नानागार एक उत्कृष्ट संरचना है, जो हड़प्पा के लोगों के विज्ञान कौशल का प्रतिनिधित्व करती है। यह 14.5 मी. लंबा, 7 मी. चौड़ी और 2.5 मीटर गहरा है। इस चबूतरे पर अन्य संरचनाओं में एक भंडारगृह, पुरोहितों का कॉलेज और एक सभागार स्थित है। निचले शहर को चार व्यापक सड़कों द्वारा प्रमुख ब्लॉकों में विभाजित किया गया था जो उत्तर-दक्षिण और पूर्व-पश्चिम की ओर जाते हैं। निचले शहरों में विभिन्न आकारों के कई घरों के अवशेष पाए गए हैं। ये संभवतः सामाजिक अंतर का संकेत देते हैं। इनमें से एक घर में प्रसिद्ध पुरोहित राजा की पत्थर की मूर्ति पाई गई है। बड़ी संख्या में दुकानें और तांबे का काम, मनका बनाना, मिट्टी के बर्तन बनाना, सीप वर्कशॉप की भी पहचान की गई है। घरों में स्नानागार के अलावा यह अनुमान लगाया गया है कि मोहनजोदड़ो में 700 से अधिक कुएँ रहे होंगे जो शहर की अनुमानित आबादी केलिए उपयुक्त थे।

मोहनजोदड़ो के उत्कीर्ण खंडहर, अग्रभूमि में महान स्नानागार और पृष्ठभूमि में भंडारगार। श्रेयः साकिब कय्यूम। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Mohenjo-daro.jpg)।

- **धौलावीरा**

धौलावीरा गुजरात के कच्छ में खादिर बेट नामक एक द्वीप पर स्थित है। यह भारतीय उपमहाद्वीप में सबसे बड़े परिपक्व हड़प्पा स्थलों में से एक है। अन्य हड़प्पा स्थलों के विपरीत, पक्की ईंटों के बजाय धोलावीरा की संरचनाएँ बलुआ पत्थर से निर्मित है। धोलावीरा की बस्ती अन्य बस्तियों से भिन्न है, जैसे कि उच्च शहर और निचले शहर के दोहरे विभाजन की बजाय इसे तीन भागों में विभाजित किया गया है: उच्च शहर, मध्य शहर और निचला शहर। उच्च शहर और मध्य शहर के बीच एक खुले क्षेत्र की पहचान एक स्टेडियम के रूप में की गई है, जिसका उपयोग संभवतः औपचारिक प्रयोजनों के लिए किया जाता था। शहर ने एक अद्वितीय जल संचयन और प्रबंधन प्रणाली का दावा किया है। यह स्थल दो धाराओं के बीच स्थित है, जिन पर बने बांध बड़े आयताकार जलाशयों में पानी को चैनलाइज करता था। ये जलाशय उच्च शहर, मध्य शहर और निचले शहर के आसपास स्थित थे। इन तीन प्रभागों के चारों ओर एक किलेबंदी की दीवार थी जिसके प्रत्येक कोने पर आयताकार गढ़ थे।

बाएँः धोलावीरा में सुरंग। दाएँः जालीदार कुँआ। श्रेयः नागार्जुन कंदुकुरु।
स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Tunnel_(16496213599).jpg; https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Meshed_well_(16494773048).jpg)।

- **तक्षशिला**

तक्षशिला सिंधु नदी के पूर्व पाकिस्तान के रावलपिंडी में स्थित है। इसका महत्व बौद्ध, जैन और ब्राह्मणवादी ग्रंथों के साथ ग्रीक-रोमन ग्रंथों से पता चलता है। पुरातात्विक दृष्टि से, यह भारतीय उपमहाद्वीप में सबसे व्यापक रूप से उत्खनित प्राचीन शहर है। तक्षशिला में तीन टीले हैं – भीर, सिरकप और सिरसुख – जो प्रारंभिक ऐतिहासिक काल के हैं। भीर सबसे पुराना शहर है जो छठी-पांचवीं शताब्दी बी.सी.ई. के आसपास शुरू हुआ था और दूसरी शताब्दी बी.सी.ई. तक जारी रहा। मौर्य काल के दौरान तक्षशिला बेतरतीब था। इसमें चार मार्ग, पांच गलियों और संबद्ध घरों की पहचान की गई है। कुछ खुले स्थानों और सड़कों पर नागरिकों द्वारा कूड़े के डिब्बे रखने का संकेत मिलता है। दूसरी बस्ती सिरकप की स्थापना दूसरी शताब्दी बी.सी.ई. में हुई थी। इसमें मुख्य सड़क के साथ ग्रिड योजना को अपनाया गया था। यह योजना चार शताब्दियों तक चली और इसने पूर्व-ग्रीक, इंडो-ग्रीक और शक-पह्लव काल का प्रतिनिधित्व किया। पहली शताब्दी के अंत में कुषाणों ने सिरसुख स्थल पर एक नया शहर बसाया।

जौलियान में बौद्ध मठ, तक्षशिला। श्रेयः मोहम्मद ओमार। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Jaulian_Buddhist_Monastery_in_Taxila.jpg)।

- **अमरावती**

अमरावती आंध्र प्रदेश के गुंटूर जिले में स्थित है। इसे धान्यकटक के रूप में जाना जाता था, जो बाद में सातवाहन की राजधानी बनी। यह तीसरी शताब्दी बी.सी.ई. से तीसरी शताब्दी सी.ई. तक फला-फूला। वहाँ एक गढ़ था जो एक विशाल मिट्टी के किलेबंदी से घिरा हुआ था। अमरावती में एक प्रमुख बौद्ध प्रतिष्ठान था। यहाँ स्थित स्तूप आंध्र क्षेत्र में सबसे बड़ा था और इसे महाचैत्य के रूप में जाना जाता था। स्तूप के स्थल का 18वीं और 19वीं शताब्दी के अंत में अन्वेषण और उत्खनन का अपभ्रा इतिहास है। बाद में सुंदर मूर्तिकला पैनलों और संगमरमर के खंभों को हटा दिया गया। इसके परिणामस्वरूप स्तूप का विघटन हो गया और अब स्थल पर केवल स्तूप का ड्रम (Drum) और कुछ संगमरमर की रेलिंग के अवशेष मौजूद हैं।

बाएँः अमरावती स्तूप पर उभरी हुई नक्काशी। श्रेयः सोहम बनर्जी। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Amaravati_Stupa_relief_at_Museum.jpg)।

दाएँः राजकुमार सिद्धार्थ (गौतम बुद्ध) का महान प्रस्थान, अमरावती। श्रेयः सेलको। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Andhra_pradesh,_la_grande_dipartita,_da_regione_di_amaravati,_II_sec.JPG)।

- **सांची**

सांची, मध्यप्रदेश के रायसेन जिले में स्थित भारत के सबसे महत्वपूर्ण बौद्ध मठ परिसरों में से एक है। यह बुद्ध के जीवन की किसी घटना से जुड़ा नहीं है, लेकिन तीसरी शताब्दी बी.सी.ई. में मौर्य सम्राट अशोक के समय से ही प्रमुख रहा है। ऐसा माना जाता है कि उन्होंने मूल स्तूप का निर्माण किया था और एक अशोक स्तंभ स्थापित किया था।

बाद में, इसे न केवल शाही राजवंशों जैसे शुंगों और सातवाहनों से संरक्षण प्राप्त हुआ, बल्कि

इसमें भिक्षुओं को भी रखा गया। सांची परिसर में कई स्तूप हैं लेकिन उनमें से तीन अपने बड़े आकार और संरक्षण की स्थिति के कारण विशिष्ट हैं। अन्य आकार में छोटे हैं और इसमें संरचनात्मक और एक चट्टानी या स्मृति स्तूप दोनों शामिल हैं। स्तूप I सबसे बड़ा स्तूप है जिसे महान स्तूप भी कहा जाता है। उत्खनन में इस स्तूप में पुरावशेष पाए गए हैं, स्थापत्य विशेषताओं के संदर्भ में यह सबसे विस्तृत है। इसका व्यास 36.60 मीटर है। और रेलिंग और छतरी के बिना इसकी ऊँचाई 16.46 मीटर है। स्तूप के पत्थर का गुंबद एक पूर्ववर्ती ईंट स्तूप को ढ़के हुए है जो संभवतः अशोक द्वारा बनाया गया था। यह एक पत्थर की रेलिंग (वेदिका) से घिरा हुआ है, जिसमें चार कार्डिनल दिशाओं पर चार तोरण (स्मारक द्वार) हैं। ये तोरण सातवाहनों द्वारा बनवाए गए थे। प्रत्येक तोरण पर विभिन्न प्रकार के विषयों को तराशा गया है जिसमें *जातक* के दृश्य, बुद्ध के जीवन के दृश्य, बौद्ध धर्म के बाद के इतिहास की घटनाएँ आदि शामिल हैं।

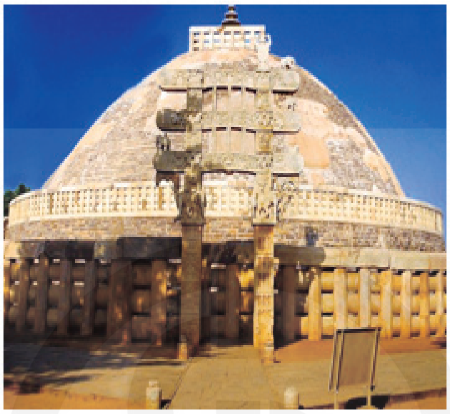

बाएँ: सांची में महान स्तूप जिसमें बुद्ध के अवशेष शामिल हैं। पूर्वी द्वार। श्रेय – रवीश व्यास। स्रोतः https://www.flickr.com/photos/32392356@N04/ 3311834772. विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sanchi_Stupa_from_Eastern_gate,_Madhya_Pradesh.jpg)।

दाएँ: सजावटी स्तंभ, सांची गुंबद की ओर स्थित। एएसआई स्मारक संख्या एन-एमपी -220। श्रेय: अमीगो और ऑस्कर। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स ((https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ornamental_Pillar_leading_to_Sanchi_Dome_(N-MP-220).jpg) ।

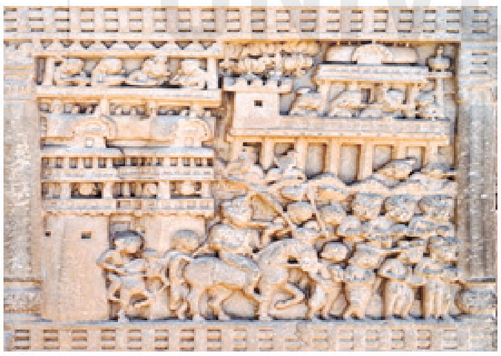

बाएँ: सांची में माया के सपने की अभिव्यक्ति, स्तूप I पूर्वी गेटवे। श्रेयः बिस्वरुप गांगुली। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/ File:Maya%27s_dream_Sanchi_Stupa_1_Eastern_gateway.jpg)।

दाएँ: बुद्ध से मिलने के लिए श्रावस्ती को छोड़ते हुए कोशल के राजा प्रसेनजीत का जुलूस, सांची स्तूप I उत्तरी गेटवे। श्रेयः बिस्वरुप गांगुली। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Procession_of_Prasenajit_of_Kosala_leaving_Sravasti_to_meet_the_Buddha.jpg)।

स्तूप II मुख्य परिसर से थोड़ा दूर स्थित है। इसकी वेदिका को विस्तृत रूप से चित्रांकित किया गया है लेकिन यह किसी भी तोरण से रहित है। खुदाई में कई बौद्ध शिक्षकों के अवशेष

मिले। स्तूप III से सारिपुत्र और मौदगल्यायन के अवशेष – बुद्ध के दो सबसे बड़े शिष्य – पाए गए। इन स्मारकों के अलावा एक बड़े मठ के अवशेष हैं। सांची विदिशा नामक एक बहुत समृद्ध व्यापारी शहर के पास एक महत्वपूर्ण व्यापार मार्ग पर स्थित है। यहाँ के दान अभिलेखों से पता चलता है कि सांची संरक्षण का लाभार्थी था। यह गुप्त काल में भी महत्वपूण था। यह यहाँ के गुप्तकाल के मन्दिरों से प्रमाणित होता है। यह 13वीं शताब्दी सी.ई. तक फला-फूला और बाद में इसका पतन हो गया। 19वीं शताब्दी की शुरुआत में जनरल टेलर द्वारा इसको खोजा गया।

पुरातत्व केवल प्राचीन काल तक ही सीमित नहीं है। उपर्युक्त पुरातात्विक स्थलों के अलावा कुछ उत्खनन स्थल हैं जो बाद के काल से भी संबंधित हैं। लाल कोट और विजयनगर ऐसे स्थलों में प्रमुख हैं। दिल्ली के महरौली में स्थित लाल कोट में खुदाई से दो सांस्कृतिक काल का पता चलाः

i) 11वीं शताब्दी के मध्य से 12वीं शताब्दी सी.ई. के अंत तक की अवधि।

ii) 12वीं शताब्दी के अंत से 14वीं शताब्दी के अंत तक की अवधि का काल (Period II) द्वितीय सल्तनत काल का था। पहले तुर्क सुल्तानों ने लाल कोट क्षेत्र में ही अपनी राजधानी बनाई थी, इसे दिहली-ए-कुहना (पुरानी दिल्ली) कहा जाता था। मध्ययुगीन विजयनगर के अवशेषों की खोज इसकी राजधानी हम्पी, कर्नाटक में की गई है। विजयनगर अनुसंधान परियोजना (वीआरपी) और विजयनगर महानगर सर्वेक्षण (वीएमएस) दो बड़े पैमाने पर पुरातात्विक परियोजनाएँ हैं, जो विजयनगर के अनुसंधान पर केंद्रित हैं।

बोध प्रश्न 2

1) भारतीय उपमहाद्वीप के आरंभिक केन्द्रों में जौ और चावल की खेती के हमारे पास क्या तथ्य हैं? मेहरगढ़ के संदर्भ में चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

2) बौद्ध धर्म से संबंधित प्रमुख पुरातात्विक स्थलों पर कला और वास्तुकला से सम्बन्धित विभिन्न विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

2.6 सारांश

पुरातत्व मानव द्वारा छोड़ी गई सामग्री के अध्ययन से अतीत को समझने में मदद मिलती है।

फील्ड-वॉकिंग द्वारा अन्वेषण एवं गैर-विनाशकारी वैज्ञानिक तरीकों के जरिए हम सामग्री इकट्ठा कर सकते हैं। पुरातात्विक स्थलों पर उत्खनन से हमें पुरावशेषों और इकोफैक्ट्स के बारे में जानकारी मिलती है। सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान की तकनीक अपनाने से अवशेषों की जाँच की जा सकती है। वे हमें मानव व्यवहार, बस्तियों, उत्पादन प्रक्रियाओं और प्राचीन प्रौद्योगिकियों, व्यापार और विनिमय, निर्वाह और आहार के बारे में जानकारी देते हैं। सामाजिक जीवन के पहलुओं जैसे स्थिति, धर्म और अनुष्ठान के बारे में हम जान सकते हैं। एक स्रोत के रूप में पुरातत्व का महत्व प्राचीन काल तक सीमित नहीं है लेकिन इसे मध्ययुगीन और यहाँ तक कि समकालीन काल के भौतिक अवशेषों तक अपनाया जा सकता है।

2.7 शब्दावली

सी.ई. : सामान्य युग (Common Era)। इसका उपयोग अन्नो डोमिनी (एडी) के स्थान पर किया जाता है, इस वर्ष ईसा मसीह का जन्म हुआ था। चूंकि इस युग का उपयोग केवल ईसाई दुनिया तक ही सीमित नहीं है, बल्कि आमतौर पर दुनिया भर में उपयोग किया जाता है, इसलिए इसे कॉमन एरा के नाम से जाना जाता है।

बी.सी.ई. : इसका प्रयोग बिफोर क्राइस्ट (ईसा पूर्व) के स्थान पर किया जाता है।

बी.पी. : वर्तमान से पहले (Before Present)। रेडियोकार्बन डेटिंग वर्तमान वर्ष 1950 में तय की गई है। उदाहरण के लिए, 4950 बीपी को 3000 बी.सी.ई. के रूप में परिवर्तित किया जाएगा।

अशुलियन (Acheulian) : फ्रांस में सेंट अशुल के स्थल के नाम पर एक व्यापक प्रारंभिक पाषाण युग की संस्कृति। इसमें बहुउद्देश्यीय पत्थर के उपकरण जैसे हाथ-कुल्हाड़ी और क्लीवर शामिल थे। यह अफ्रीका, यूरोप और एशिया में फैला हुआ था। यह लगभग 1.65 मिलियन वर्ष पूर्व से 1,00,000 वर्ष पूर्व की है।

इस्तेमाल के सूक्ष्म चिन्ह : उपयोग, पॉलिशिंग या घर्षण के कारण उपकरणों के किनारे की क्षति के पैटर्न का विश्लेषण केवल माइक्रोस्कोप के माध्यम से किया जा सकता है। इन चिन्हों का विश्लेषण बताता है कि उपकरण कैसे उपयोग किए गए होंगे।

पेट्रोग्राफी : चट्टानों की संरचना का अध्ययन। पुरातत्व विज्ञान में आम तौर पर मिट्टी के खनिज घटकों की पहचान करके यह अनुमान लगाया जाता है कि इसका उपयोग कैसे हुआ।

पायरो-प्रौद्योगिकी : मानव द्वारा आग का जानबूझकर और नियंत्रित उपयोग। विभिन्न शिल्प प्रस्तुतियों में हीट ट्रीटमेंट

आवश्यक है, जिसके लिए कुछ तापमानों को प्राप्त करना और आवश्यकतानुसार बनाए रखना होता है।

टाइपोलॉजी : यह उपकरण को डिजाइन और दक्षता में सुधार के आधार पर और मिट्टी के बर्तनों और गहनों को रूप और सजावट के अनुसार अनुक्रमों में बाँटता है।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपको सर्वेक्षण के गैर-विनाशकारी पहलू पर ज़ोर देना चाहिए और इसमें प्रयुक्त तकनीकों का उल्लेख करना चाहिए। अन्वेषण की एक सीमा यह है कि सतह पर पाए गए अवशेष अपने मूल संदर्भों में नहीं है। पुरावशेष और इकोफैक्ट को उनके उचित संदर्भ में समझने के लिए, स्थलों की खुदाई की जाती है। अन्वेषण और उत्खनन पर अनुभाग देखें।

2) आपको विभिन्न तरीकों और तकनीकों को सूचीबद्ध करना चाहिए जो साक्ष्यों से जानकारी निकालने में मदद करते हैं। भाग 2.4 को देखें।

बोध प्रश्न 2

1) मेहरगढ़ पर भाग 2.5 को देखें।

2) अमरावती और सांची के लिए भाग 2.5 के उपभागों को देखें।

2.9 संदर्भ ग्रंथ

चक्रवर्ती, डी. के. (2001) *इंडिया, एन आर्कोयोलॉजिकल हिस्ट्रीः पैल्योलिथिक बिगनिग्स टू अर्ली हिस्टोरिक फाउण्डेशन्स.* नई दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ड्रिवेट, पी. एल. (1999) *फील्ड आर्कोयोलॉजी : एन इंट्रोडक्शन.* लंदनः यूसीएल प्रेस।

ग्रीन, के. (2002) *आर्कोयोलॉजी : एन इंट्रोडक्शन.* लंदन और न्यूयॉर्कः रूटलेज।

रैनफ्रू, सी. एवं पी. ब्हान (2012) *आर्कोयोलॉजी : थ्योरीज़, मैथड्स एंड प्रैक्टिस.* छठवाँ संस्करण, लंदनः थेम्स और हडसन।